International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

रत्नकुमार सांभरिया का साहित्य में हाशिये के समाज में अस्तित्ववादी चेतना

महिपाल सिंह

गाँव-थोब, तह-कल्याणपुर, जिला-बालोतरा

सारांश

मनुष्य को प्रकृति ने उसे सबसे समन्वय करने की प्रेरणा दी है, पर मनुष्य ने अपनी बुद्धि से सबको तीतर-बीतर कर धाक जमाने की कोशिश की। जिससे अनेक प्रजातियों विलुप्ती के कगार पर खड़ी है। मनुष्य ने स्वयं को भी रंग, जाति, धर्म, क्षेत्र आदि के आधार पर 'बाँटकर नयी परंपरा शुरू की। इसी वर्गीकरण के कारण कुछ मनुष्यों में अहंकार हिलोरे मारने लगता है तथा कुछ मनुष्य अपने आपको इतना हीन समझाने लगते हैं कि उनका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है। परिणाम स्वरूप दबे-कुचले मनुष्य ने स्वयं के अस्तित्व को बचाने का संकल्प किया। साहित्य भी इस अस्तित्ववादी चेतना से परे नहीं हैं।

बीज शब्द – सांभरिया, अस्तित्व, चेतना, नटनी, साँप, वीमा, एयरगन का गोड़ा।

मूल आलेख

लेखक रत्नकुमार सांभरिया ने अपनी रचनाओं के पात्र केवल इसलिए जिंदा है, क्योंकि उनमें अस्तित्व की चेतना है। वे मनुष्य द्वारा बनाए गए नियमों का कड़ा विरोध करते हैं। इनके पात्रों में अस्तित्व के साथ ही आत्मसम्मान जुड़ा हुआ है। इस आत्मसम्मान से ही मनुष्य जनसम्मान को प्राप्त करता है।

कहानी 'खबर' में आज की पत्रकारिता में अस्तित्वहीन होते जा रहे मानकों के खिलाफ एक महिला संवाददाता पत्रकारिता के अस्तित्व के लिए लड़ती हैं। उस महिला संवाददाता को प्रभूत वर्ग द्वारा खबर छापने से रोका जाता है, क्योंकि उस खबर से धनी व्यक्ति की पोल खुल सकती हैं। महिला संवाददाता को लगता है कि यह तो लोकतंत्र के मुख्य स्तंभ पर सीधा-सीधा हमला है। अपनी अस्तित्ववादी चेतना के कारण 'खबर' कहानी की संवाददाता आत्मआहत होकर प्रसिद्ध अखबार से त्याग पत्र दे देती है। "चोट से देह घायल होती है, दगा से आत्म आहत होता है। घायल देह के घाव भर जाते हैं, आत्म का आहत सिल पर निशान की तरह होता है, मिटे नहीं मिटता। पलकें झपझपा कर वह बोली-सर आप ही बताइये, जहाँ इतना गोल हो, घुटन हो, वहाँ नौकरी हो सकती है भला।"[1] इस तरह से संवाददाता ने अपने अस्तित्व का सम्मान किया तथा अपनी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। इससे पता लगता है कि अस्तित्व और आत्मसम्मान के साथ कहीं दूसरी जगह भी नौकरी प्राप्त की जा सकती है, लेकिन यदि ये दोनों ही नहीं हैं तो नौकरी तो दूसरे स्तर की बात है।

कहानी 'खेत' केहर सिंह के अस्तित्ववादी चेतना को लेकर पाठकों के सामने आती है। केहर सिंह के लिए उसका खेत ही उसकी अस्तित्ववादी चेतना हैं। खेत ही उसका सहारा है। बाजारवादी संस्कृति ने खेत को घेर रखा था। बाजार के लिए अस्तित्व के कोई मायने नहीं हैं। केहर सिंह का खेत बाजार के बीच में

था। बाजार इतना संवेदनहीन हो जाता है कि उसे ठगने की कोशिश करता है। लेकिन केहर सिंह अपने अस्तित्व की चेतना से खेत को बचा लेता है।

कहानी 'बदन दबना' में 'पूछा' नामक पात्र हल्का सिंह यहाँ टहलवाई की नौकरी करता है। अपने बच्चे और परिवार का अस्तित्व बचाने के लिए जमींदार से विद्रोह कर बैठता है। उसकी अन्तर्रात्मा उसे बार-बार विद्रोह के लिए उकसाती है। पूछा जितनी बार अपनी बहन की शादी में जाने के लिए हल्का से पूछता है, उतनी ही बार उसे हल्का सिंह हड़काता है। गरीब जितना झुकता जाएगा, पूँजीपति को उस पर सवार होने में उतनी ही आसानी होती है। हल्का सिंह ने उसे बेंत मार दी तो 'पूछा' के स्वाभिमान को चोट पहुँची। "एकाएक उसकी आँखों के आँसू थम गए थे, रोते बिसुरते होंठ थिर गए थे। अत्याचारी अंग्रेजों से भी ढोर-निठुर है यह तो। अग्नि और काठ के योग से आग धू-धू जलने लगती है। मन में उठे शहीदाना क्रोध और जज़्बाती क्षोभ से पूछा का अंतस फटने लगता है।"[2] लेखक स्पष्ट करते हैं कि विरोध ही एक ऐसा साधन है, जिससे अस्तित्व की रक्षा होती है। 'मैं जीती' कहानी में दीदी और एक लड़की पात्र का अस्तित्व एक-दूसरे जुड़ा हुआ है। अत: इनकी कहानियाँ सहअस्तित्व के भाव को महत्त्व देती है।

लेखक का 'वीमा' नाटक जमन और वीमा के अस्तित्व की चेतना का प्रतीक है। जमन और वीमा अपने अस्तित्व के लिए लड़ाई लड़ते हैं। विकलांग होने के बावजूद स्वाभिमान और आत्मसम्मान ही उनका अस्तित्व है। श्यामा जी के द्वारा वीमा का अपहरण करने के बाद श्यामा जी उन्हें धमकाते हुए उसके शरीर की बोटी-बोटी करने की धमकी देते हैं। जमन के शरीर में खून खौल उठता है और अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ने के लिए तैयार होता है और वह कहता है- "कर दो बोटी-बोटी, अगर हिम्मत हो।"[3] जमन की तरह वीमा भी दूसरी जगह शादी करने का प्रतिकार करती है और अपने अस्तित्व को बचाने में सफल होती है- "मैंने तो ताल-ठोक कर ना कह दी। ना ही सबसे बड़ा हथियार था मेरा।"[4] वीमा के अंधे होने के बाद भी अपने स्वयं निर्णय लेना एक अस्तित्ववादी चेतना का जीता जागता उदाहरण है। इस प्रकार 'वीमा' नाटक में विवाह के पवित्र बंधन के अस्तित्व को बनाए रखने का प्रयास है। वीमा और जमन अपने-अपने अस्तित्व के लिए दोनों मिलकर और अलग-अलग रूप से संघर्ष करते हैं। वे उन सब बाधाओं से संघर्ष करते हुए नजर आते हैं, जिससे उनके अस्तित्व पर खतरा है।

'नटनी' उपन्यास में राजनीतिक और सामाजिक अस्तित्व की लड़ाई है। उपन्यास के स्त्री पात्र अपने अस्तित्व को स्थापित करते हैं। रज्जो, लाजो और फुलकुमारी इसके प्रमुख उदाहरण है। रज्जो शिक्षित होकर स्त्री के अस्तित्व की लड़ाई लड़ती हैं। लाजो अपने गाँव की अस्मिता और पति की शहादत का सहारा लेकर के अस्तित्व की लड़ाई लड़ती है, तो फुलकुमारी शिक्षा के माध्यम से समाज में स्त्री के अस्तित्व का परिदृश्य खड़ा करती है। जिगर सिंह की पत्नी शीतल भी जिगर सिंह को स्वयं के अस्तित्व को पहचानने की हिदायत देती है और कहती है कि अगर अपना अस्तित्व बनाए रखना है तो "जात-पाँत के पचड़े से ऊपर उठ जाओ, वक्त आपकी मुट्ठी में है।"[5] यहाँ, 'वक्त आपकी मुट्ठी में है' वाक्य समय अनुसार अपने अस्तित्व की पहचान का सार्थक पर्याय है।

'नटनी' उपन्यास में लोकतंत्र के अस्तित्व का विषय भी उठाया है। रज्जो के सरपंच बनने से पूर्व जनता द्वारा चुनी हुई प्रतिनिधि हवेली में बैठकर लोकतंत्र को अस्तित्वहीन करने में मजबूर थी। हवेली ने लोकतंत्र को अपने रखेल बना रखा था। लोकतंत्र के अस्तित्व की लड़ाई लड़ते हुए रज्जो कहती है- "गाँव की सत्ता उसके हाथ आ जाएगी तो वह पंचायत भवन में जन अदालत लगाकर ग्रामीणों के अभाव अभियोग सुना करेगी। परिवेदनाओं और विवादों का निपटान वहीं हुआ करेगा।"[6]

लाजो देवी सरपंची पद के लिए वोट माँगने हेतु हवेली के द्वार तक दस्तक देती है, तो जिगर सिंह हक्का-बक्का रह जाता है। जिगर सिंह अपने अस्तित्व बचाने की चिंता करता है तो लाजो देवी लोकतंत्र के अस्तित्व को बचाने की वकालत करती है। "जिगर सिंह का सर्वांग धधक उठा था। सन् 1952 से लेकर आज तक कितने चुनाव हुए, प्रतिद्वन्द्वी वोट माँगने के लिए हवेली की देहरी नहीं चढ़ा। यह एक ऐसा हादसा था, जिसकी उसने कल्पना तक नहीं की थी। हवेली की मान-मर्यादा चींथ देने वाला कदम था।"[7]

अत: 'नटनी' उपन्यास में विशेष रूप से हाशिये के समाज के राजनीतिक और सामाजिक अस्तित्व को केंद्र में रखा है। जिगर सिंह हाशिये के समाज के अस्तित्व को मिटाने की कोशिश करता है। लाजो देवी और रज्जो ने लोकतांत्रिक अस्तित्व को स्थापित करने का सफल प्रयास किया।

'एयरगन का घोड़ा' कहानी सामंती विचार का विरोध करती हुई हाशिये के समाज के अस्तित्व बचाने के संघर्ष की कहानी है। बी.आर. मानू और उसके काका हवेली में बेगारी का काम करते हैं। एक दिन काका क्रोध में आकर के हवेली छोड़ देते हैं। जिससे बी.आर. मानू को भी सभी से छुटकारा मिल जाता है। "काका भले कुछ कह नहीं पाए। लेकिन उनका क्रोध जज्ब नहीं हुआ। एक नई सोच, एक नई हिम्मत उनमें पैदा हुई। द्रोह ने फन निकाल लिया। दूसरे दिन से ही उन्होंने कीरचन्द की हवेली, छोड़ दी और खुली मजूरी पकड़ ली थी। काका के हवेली छोड़ते ही भूरजी की बेड़ियाँ भी झड़ गई, जैसे। काका के देखा-देखी दूसरे लोगों ने भी एक के बाद एक ज़मींदारों की हवेलियाँ छोड़ दीं और खुली मजूरी करने लगे।"[8]

लेखक का 'साँप' उपन्यास घुमंतू समाज के अस्तित्व के संघर्ष का दस्तावेज है। लखीनाथ इस उपन्यास की अस्तित्ववादी चेतना का नायक है। मिलन देवी इस चेतना के विस्तृत स्वरूप की सहयोगी है। उपन्यास के नायक लखीराम हर जगह संघर्ष करता हुआ नजर आता है लेकिन अपने संस्कारों और रीति-रिवाज से कभी समझौता नहीं करता। लखीनाथ घुमंतू समाज के अस्तित्व को बचाते हुए आधुनिक जीवन शैली का पक्षधर है। लखीनाथ के अस्तित्व बचाने का सबसे बड़ा शस्त्र शिक्षा है। लखीनाथ को नींव से साँप निकालने के लिए जब मुकुंद दास लेने आता है। लखीनाथ अपने बच्चों को विद्यालय भेजने की तैयारी कर रहा होता है। मुकुंद दास उसे विद्यालय भेजने से मना करके जल्दी साथ चलने को कहता है। "लखीनाथ बच्चे की एक दिन की नागा से फर्क नहीं पड़ेगा। मुँह माँगा मेहनताना लो। लखीनाथ तुनक उठा- "कितना दोगा? सौ, दो सौ, पाँच सौ, हजार? मेरे टाबर की एक दिन की नागा के सामै सब धन दीन।"[9] अर्थात लखीनाथ का बेटा विद्यालय नहीं जाए तो कोई फर्क नहीं पड़ता लेकिन लखीनाथ अपने अस्तित्व को जानता है और बच्चे को विद्यालय भेजने की हिमाक़त करता है।

लखीनाथ को जब मिलन अपने प्रेमपाश में बाँधना चाहती है और उसे प्रेम-प्रस्ताव देती है, लेकिन लखीनाथ अपने घुमक्कड़ जीवन के अस्तित्व संस्कारों की रक्षा करता हुआ दिखाई देता है। मिलन देवी एक प्रसंग में स्पष्ट करती है कि "वह यकीन के साथ यहाँ तक बढ़ी थीं, लखीनाथ सपेरा घुमक्कड़ है, अहसानों तले दबा पालतू सा है। उसे क्या मालूम था, सपेरा दीन-ईमान का धनी है। छोटी जात के लोग आन के पक्के और तन के सच्चे होते हैं। भूखे पेट जमीर जिन्दा है, इनमें। कैसे-कैसे प्रस्ताव मिलनदेवी के चरणों गिरते थे। आज अपने प्रस्ताव बड़ों पानी पड़ गया।"[10]

लखीनाथ को प्रत्येक व्यक्ति खरीदना चाहता है। उसे अपना बनाना चाहता है। लेकिन लखीनाथ अपने अस्तित्व की रक्षा स्वाभिमान के साथ करता है। घुमंतुओं के मकान निर्माण में ठेकेदार भ्रष्टाचार की कोशिश करते हुए लखीनाथ को खरीदना चाहता है। तब लखीनाथ अपने अस्तित्वादी चेतना के साथ में

इस प्रस्ताव को ठुकरा देता है- "अरे भाई सौ रुपये पर एक रुपया कमीशन मिलेगा, तुम्हें। गरीबी भाग खड़ी होगी। पीढ़ियाँ याद करेंगी।'

ठेकेदार के लोभ लालच का प्रस्ताव लखीनाथ के कारजे ने भाले जैसा धँसा। सर्वांग जल उठा। आँखों से लपटें निकलने लगीं। दाँत किटकिटाता हुआ सोचता रहा, 'बिन ताल जुबान को पसु है, सपेरा तू। चारो डालै। गरीब घुमंतू समझ पीसा से मुँहड़ो बन्द करनो चाहवै। भीतरला ने खरीदे। किमीसन पाऊँ। बसती माता को जिगर खाऊँ। इससे आछो साँप डसवा के ही ना मर जाऊँ।"[11] इस प्रकार 'साँप' उपन्यास हाशिये के समाज विशेषकर घुमंतू जनजाति के संघर्ष और अस्तित्व में चेतना को केंद्र में रखा है। लखीनाथ विभिन्न स्तरों पर अपने समाज और स्वयं के अस्तित्व को बचाने का सफल प्रयास करता है।

'भलूल्या' नाटक में लेखक धियानाराम द्वारा आँधी तूफान आने के कारण अपनी झोपड़ी उड़ गई और उसके पश्चात एक खूँटा गाड़कर कर उसे ही संबोधित करते हुए कहता है- "साहेब, ये आँधी भभूल्या नहीं उड़ा सकते तुम्हें। नहीं उड़ा सकते। कबीर हो तुम। अजर हो, अमर हो। ये आँधी भभूल्या तो थोड़ी बहुत देर के होते हैं। (बकरे की ओर देख कर) मेरी तरफ देखे जाता है। देखे जाता है। अरे, चूँट चर ले भई। भूखा है, तू।"[12] इस पूरे नाटक में धियानाराम अपनी जाति एवं स्वयं के अस्तित्व को बनाए रखते हुए पुलिस से संघर्ष करता है।

निष्कर्ष

रत्नकुमार सांभरिया के पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं में एक बात सबमें समान है, वह है उनकी अस्तित्ववादी चेतना। प्रत्येक पात्र अपने अस्तित्व को जानता है। अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए संघर्ष करने से भी नहीं कतराता है। उनकी अनेक कहानियाँ अस्तित्ववादी चेतना के आधार पर रची गई। 'गूँज', 'अकाल', 'कील', 'फूलवा', 'चमरवा' आदि शीर्षक अपने आप में अस्तित्ववादी चेतना के प्रतीक है। रत्नकुमार सांभरिया के साहित्य में अस्तित्वादी चेतना का प्राकट्य आक्रोश व विद्रोह सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक सभी स्तरों पर प्रकट हुआ है। वे अपनी अस्तित्व को बचाने के लिए जड़ विचार एवं पुरातन हो चली मान्यताओं पर करारी चोट करने से नहीं चुकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सांभरिया, रत्नकुमार : एयरगन का घोड़ा, अनामिका प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, 2015, पृ. 239
2. सांभरिया, रत्नकुमार : खेत एवं अन्य कहानियाँ, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2012, पृ. 115
3. सांभरिया, रत्नकुमार : वीमा, अनामिका पब्लिशर्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2012, पृ. 22
4. वही, पृ. 44
5. सांभरिया, रत्नकुमार : नटनी, सेतु प्रकाशन, नोएडा, 2025, पृ. 57
6. वही, पृ. 89
7. वही, पृ. 150
8. सांभरिया, रत्नकुमार : एयरगन का घोड़ा, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2012, पृ. 68
9. सांभरिया, रत्नकुमार : साँप, सेतु प्रकाशन, नोएडा, 2022, पृ. 30
10. वही, पृ. 195
11. वही, पृ. 316
12. सांभरिया, रत्नकुमार : भलूल्या, स्वराज प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2018, पृ. 07